अष्टम अध्याय

प्रायश्चित्त-विवेचन

वैदिक साहित्य में प्रायश्चित्त एवं प्रायश्चित्ति शब्द का प्रयोग अनेक स्थलों पर हुआ है। इन का अर्थ एक ही है। यद्यपि प्रायश्चित्ति अपेक्षाकृत अधिक प्राचीन लगता है।[1] तैत्तिरीय संहिता में प्रायश्चित्त शब्द का प्रयोग एकाधिक बार प्रयुक्त हुआ है।[2] इसका अर्थ है कि कोई ऐसा कार्य करना जिससे किसी अचानक घटित घटना या अनर्थ का निवारण हो सके अथवा दुष्प्रभाव को दूर करने के लिए जो उपाय किया जाता है वही प्रायश्चित्त है।

प्रायश्चित्त शब्द की व्युत्पत्ति कुछ विद्वानों ने प्रायः (अर्थात् तप) एवं चित्त (अर्थात् संकल्प या दृढ विश्वास) से की है। इसका तात्पर्य यह है कि इसका सम्बन्ध तप करने के संकल्प से है कि इससे पाप का मोचन होगा।[3]

महामहोपाध्याय पी0 वी0 काणे ने हेमाद्रि को उद्घृत करते हुए लिखा है कि – हेमाद्रि ने भी एक अज्ञात भाष्यकार की ओर संकेत किया है कि प्रायः का अर्थ है 'विनाश' और चित्त का अर्थ है 'संधान' एक साथ जोड़ना अर्थात् जो नष्ट हो गया है उसकी पूर्ति। अतः यह पाप का निवारण करने के लिए नैमित्तिक कार्य हुआ।[4]

---

1 ध0 शा0 का इति0, अ0 3, पृ0 1043

2 असवादित्यो न व्योरचत तस्मै देवा प्रायश्चित्तिमैच्छन्, तै0 सं0 2.1.2.4 एवं 2.11.4.1

3 प्रायो नाम तपः प्रोक्तं चित्तं निश्चय उच्यते। तपो निश्चय संयोगात्प्रायश्चित्तमिति स्मृतम्। अंगिरा। प्रयाश्चित्त विवेक, पृ0 2, गौ0 ध0 सू0 3.1.3 पर हरदत्त व्याख्या, पृ0 199

4 यत्तु पक्षधरमिश्रभक्तूपाध्यायटोडरानन्दकृतः प्रायः पापं विजानीयाच्चित्तं तस्य विशोधनमिति च पेठुः तत्राकरश्चिन्त्यः। प्राय0 म0 पृ0 2 ; भाष्यकारस्तु प्रायो विनाशः चित्तं सन्धानं विनष्टस्य सन्धानमिति विभागयोगेन प्रायश्चित्त शब्दः पाप क्षयार्थे नैमित्तिके कर्म विशेषे वर्तते। हेमाद्रि प्रायश्चित्त, पृ0 989, ध0 शा0 इति0, पृ0 1044

हारीत के अनुसार प्रायश्चित्त का अर्थ है कि ऐसे कार्य करना जिनसे अपने एकत्र पापों का नाश हो जाता है जैसे – तप, दान एवं यज्ञ आदि जिनसे व्यक्ति स्वतः पवित्र हो जाता है।[1]

आचार्य बृहस्पति ने पापों के दो प्रकार बतलाये हैं। कामकृत और अकामकृत। जानबूझ कर किए गए पापों को कामकृत कहते हैं, जो पाप बिना जाने बूझे हो जाते हैं उन्हें अकामकृत कहते हैं।[2]

जानबूझ कर किये गए पापों के विषय में गौतम[3] व वसिष्ठ[4] आदि ने बतलाया है कि प्रायश्चित्त करने से भी पाप नाश नहीं होता। मनु[5] एवं याज्ञवल्क्य[6] ने इन पापों के विषय में कहा है कि अनजाने में किए गए पापों का नाश प्रायश्चित्त अथवा वेदाध्ययन से किया जा सकता है।

बौधायनधर्मसूत्र में भी कहा गया है कि ऐसे कर्मो के निमित्त प्रायश्चित्त नहीं करना चाहिए।[7] जिसमें सन्देह हो जाए कि प्रायश्चित्त करने से पाप नष्ट होगें या नहीं। बौधायन ने कहा है कि प्रायश्चित्त कर लेने पर भी पाप नष्ट नहीं होंगे।[8] याज्ञवल्क्य का कहना है कि प्रायश्चित्त जानबूझ कर किए गए पापों को नष्ट नहीं करते अपितु पापी प्रायश्चित्त

---

1 प्रयतत्वादौपचितमशुभं कर्म नाशयतीति प्रायश्चित्तमिति। यत्तपः प्रभृतिकं कर्म उपचितं संचितमशुभं पापं नाशयतीति। हारीत प्राय० तत्त्व०, पृ० 467, ध० शा० इति०, पृ० 1045

2 ध० शा० इति०, पृ० 1045

3 गौ० ध० सू० 3.1.3-6

4 व० ध० सू० 22/2–5

5 मनु स्मृ० 11/45

6 याज्ञ० स्मृ० 3/226

7 तत्र प्रायश्चित्तं कुर्यान्न कुर्यादिति। बौ० ध० सू० 3.10.10.4

8 न हि कर्म क्षीयते इति। बौ० ध० सू० 3.10.10.5

करके अन्य लोगों की संगति में आ जाने योग्य हो जाता है।[1] मनु भी इसी बात को पुष्ट करते हैं।[2]

प्रायश्चित्त के विषय में आपस्तम्बधर्मसूत्र के प्रथम प्रश्न के नवम पटल में विस्तृत वर्णन किया गया है। प्रायश्चित्त सम्बन्धी साहित्य बहुत विशाल है। गौतमधर्मसूत्र के 28 अध्यायों में दस अध्याय प्रायश्चित्त विषयक हैं। वसिष्ठधर्मसूत्र में मुद्रित 30 अध्यायों में 9 अध्याय प्रायश्चित्त विषय पर ही हैं। प्रस्तुत अध्याय में आपस्तम्बधर्मसूत्र के अनुसार मुख्यतः चार प्रकार के प्रायश्चित्तों का वर्णन किया गया है –

(1) वध विषयक प्रायश्चित्त

आपस्तम्बधर्मसूत्र में प्रथम प्रश्न के नवम पटल की 24वीं कण्डिका में वध विषयक प्रायश्चित्त का वर्णन मिलता है। यह वध दो प्रकार का है –

(क) मानव–वध

(ख) पशु–वध

मानव-वध विषयक प्रायश्चित्त – मनुष्य का वध हो जाने पर प्रायश्चित्त की व्यवस्था वर्ण के अनुसार कही गयी है।

ब्राह्मण-वध विषयक प्रायश्चित्त – वध करने वाला यदि केवल मात्र ब्राह्मण वर्ण के पुरुष का या ब्राह्मण वर्ण के गर्भ का वध करता है चाहे उसे गर्भ के लिङ्ग का भी ज्ञान न हो तो हत्या करने वाला अभिशस्त कहलाता है। उस ब्राह्मण का वेदज्ञ या विद्वान् अथवा संस्कार युक्त होना आवश्यक नहीं है।[3] ब्राह्मण जाति को सभी धर्मसूत्रकारों ने श्रेष्ठ व

---

1 याज्ञवल्क्य स्मृ0 3/226

2 मनु स्मृ0 11/189

3 'ब्राह्मणमात्रं च' आ0 ध0 सू0 1.9.24.7, गर्भं च तस्याऽविज्ञातम् वही 1.9.24.8, गौ0 ध0 सू0 3.4.13

पूजनीय तथा अदण्डनीय एवं अवधनीय माना है। गौतम तो ब्राह्मणवध करने वाले को प्रायश्चित्त का निषेध करते हैं।[1]

इसी प्रकार आत्रेयी अर्थात् ऋतुस्नाता ब्राह्मण स्त्री का वध करने वाला अपना या दूसरे का जीवन लेने वाला अभिशस्त होता है।[2]

आपस्तम्बधर्मसूत्र में अभिशस्त व्यक्ति के प्रायश्चित्त का विधान यह है कि वह वन में एक कुटिया बनाए और वाणी को रोककर सिर के ऊपर मनुष्य की खोपड़ी रखकर तथा शरीर को नाभि से घुटने तक के भाग को सन के वस्त्र के चौथाई भाग से ढक कर बारह वर्ष तक इस प्रकार का जीवन यापन करना चाहिए।[3] उसे गाँव में प्रवेश करते समय गाड़ी आदि के दोनों ओर के बीच के भाग का मार्ग चलने को प्रयोग करना चाहिए।[4]

उस हत्यारे को दूसरे व्यक्ति को अर्थात् आर्य को देखकर मार्ग छोड़कर हट जाना चाहिए।[5] घटिया किस्म की धातु के पात्र का खर्पर (भिक्षापात्र) लेकर भिक्षार्थ गाँव में प्रवेश करना चाहिए।[6] उसे अपने पाप के प्रति "मुझ अभिशस्त को कौन भिक्षा देगा" ऐसी पुकार लगाते हुए सात घरों में ही भिक्षा मांगनी चाहिए।[7] इस प्रकार याचना करने पर जो कुछ मिल जावे उसी से ही गुज़ारा करे चाहे वह अपर्याप्त क्यों न हो।[8]

---

1 गौ0 ध0 सू0 3.3.7, 17

2 आत्रेयीं च स्त्रियम्, आ0 ध0 सू0 1.9.24.9, 1.10.28.17, ऋतु स्नातामात्रेयीमाहुरिति, वसिष्ठः आ0 ध0 सू0, पृ0 181 हरदत्त की व्याख्या के अन्तर्गत, वि0 ध0 सू0 10.94

3 आरण्ये कुटिं कृत्वा वाग्यतः शवशिरध्वजोऽर्धशाणोपक्षमधोनाभ्युपरिजान्वाच्छाद्य। आ0 ध0 सू0 1. 9.24.11, 20 गौ0 ध0 सू0 3.4.4

4 तस्या पन्था अन्तरा वर्त्मनी। आ0 ध0 सू0 1.9.24.12

5 दृष्ट्वा चाऽन्यमुत्क्रामेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.24.13, गौ0ध0 सू0 3.4.5

6 खण्डेन लोहितकेन शरावेण ग्रामे प्रतिष्ठेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.24.14

7 कोऽभिशस्ताया भिक्षामिति सप्तागारं चरेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.24.15

8 सा वृत्तिः। आ0 ध0 सू0 1.9.24.16

यदि सात घरों में भिक्षाटन करने पर कुछ भी प्राप्त न हो तो उपवास करने का विधान है।[1] उसे गायों[2] की रक्षा करनी चाहिए, उन्हें चराने व पुनः लौटाने हेतु ग्राम में प्रवेश करना चाहिए। आपस्तम्बधर्मसूत्र में यह भी उल्लेख मिलता है कि जब गायें निकलती हैं और ग्राम में प्रवेश करती हैं वह उसके भिक्षार्थ दूसरी बार का समय होता है। उस समय पुनः भिक्षा की याचना कर सकता है।[3]

गौतम[4] के मत से पापी को वैदिक ब्रह्मचारी के नियमों का पालन करना चाहिए। उसे गाँव में केवल भिक्षा के लिए जाना चाहिए और अपने पाप का उद्घोष करना चाहिए। हाथ में एक चारपाई का पाया लेकर विचरण करना चाहिए।

ब्राह्मण की हत्या करने वाले पापी के निमित्त प्रायश्चित्त का जो विधान आपस्तम्बधर्मसूत्रकार व गौतमधर्मसूत्रकार ने किया है उनकी बात का समर्थन बौधायनधर्मसूत्रकार[5] ने भी द्वितीय प्रश्न के तृतीय सूत्र में किया है।

बारह वर्ष तक यह प्रायश्चित्त करने के बाद उस शास्त्र के नियम व शिष्टाचार का पालन करने योग्य होता है अर्थात् जिसके द्वारा वह पापी पुनः सज्जनों के समाज में प्रवेश योग्य होता है।[6] अथवा बारह वर्ष तक इस प्रायश्चित्त को करने के बाद चोरों के ग्राम में कुटिया बनावे और चोरों द्वारा ब्राह्मण की अपहृत गायों को छुड़ाने का कार्य करता रहे।

---

1 अलब्ध्वोपवासः। आ0 ध0 सू0 1.9.24.17

2 गाश्च रक्षेत्, आ0 ध0 सू0 1.9.24.18

3 वही 1.25.19

4 खट्वाङ्गकपालपाणिर्वा द्वादश संवत्सरान्ब्रह्मचारी भैक्षाय ग्रामं प्रविशेत्कर्माऽऽचक्षाणः।
गौ0ध0 सू0 3.4.3

5 कपाली खट्वाङ्गी गर्दभचर्मवासा अरण्यनिकेतनः श्मशाने ध्वजं – इत्यादि बौ0 ध0 सू0 2.1.1.3

6 द्वादश वर्षाणि चरित्वा सिद्धः सदृभिस्सम्प्रयोगः। आ0 ध0 सू0 1.9.24.20

चोरों से तीन–बार पराजित होने पर या उन को परास्त कर लेने पर वह पाप मुक्त हो जाता है।[1]

यदि उपर्युक्त नियम का पालन न कर सके तो अश्वमेध का अवभृथ स्नान करे अर्थात् अश्वमेध यज्ञ के अन्त में ऋत्विजों के साथ अवभृथ स्नान करने पर वह पाप से मुक्त हो जाता है।[2] इसी बात का समर्थन गौतम[3] तथा बौधायनधर्मसूत्रकार[4] ने भी किया है।

गुरु (पिता आचार्य आदि) वेद के विद्वान् तथा सोमयज्ञ का अन्तिम कर्म कर लेने वाले श्रोत्रिय का वध करने वाला पापी इसी प्रायश्चित्त का अन्तिम श्वास तक पालन करता रहे। उसकी पाप सम्बन्धी मुक्ति इस संसार में नहीं होती। मृत्यु के बाद उस पापी के पाप दूर हो जाते हैं।[5]

वेद–वेदाङ्ग के ज्ञाता ब्राह्मण की हत्या करने वाले को कुत्ते या गदर्भ का चर्म पहन कर रोओं को बाहर कर के चलने व जल पीने के लिए मनुष्य की खोपड़ी का विधान किया गया है।[6]

यदि ब्राह्मण के अतिरिक्त क्षत्रियादि अन्य वर्ण के मनुष्य ने ब्राह्मण का वध किया हो तो वह अपने पाप के प्रायश्चित्त के लिए युद्ध में जाकर दोनों पक्षों के बीच खड़ा हो जाये ताकि वहाँ सैनिक उसका वध कर दें जिससे उसकी मृत्यु हो जाने पर वह पाप से

---

1 (क) आजिपथे वा कुटिं कृत्वा ब्राह्मणगव्योपजिगीषमाणोवसेत्रिः प्रतिराद्धोऽपजित्य वा मुक्तः।।
आ0 ध0 सू0 1.9.24.21

(ख) द्रव्यापचये त्र्यवरं प्रतिराद्धः। गौ0 ध0 सू0 3.4.8

2 आश्वमेधिकं वाऽवभृथमवेत्य मुच्यते। आ0 ध0 सू0 1.9.24.22

3 अश्वमेधावभृथे वा – गौ0 ध0 सू0 3.4.9

4 अश्वमेधावभृथे वाऽऽत्मानं प्लावयेत्। बौ0 ध0 सू0 2.1.1.5

5 गुरुं हत्वा श्रोत्रियं . .वा कर्मसमाप्तमेतेनैव विधिनोक्तमादुच्छ्वासाच्चरेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.24.24

6 अथ भ्रूणहाश्वाजिनं .... इत्यादि। आ0 ध0 सू0 1.10.28.21

शुद्ध हो जाता है।[1] गौतम ने भी यही कहा है।[2] अथवा इसका प्रायश्चित्त करने के लिए अपने शरीर के रोम, त्वचा, माँस, निकालकर अग्नि से हवन कराये व अपने शरीर को अग्नि में झोक दे। गौतमधर्मसूत्रकार इस पाप के प्रायश्चित्त के लिए विधान करते है कि हत्या करने वाला भोजन–त्याग कर दुर्बल शरीर हो कर तीन बार अग्नि में कूदे तो उसका प्रायश्चित सम्भव है।[3]

क्षत्रिय वध विषयक प्रायश्चित्त

यदि क्षत्रिय[4] की हत्या हो जाए तो पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए एक हज़ार गायें व एक साँड का दान करना चाहिए। यह प्रायश्चित्त वैरायतनार्थ (अर्थात् जिसकी हत्या की गई है उसके मन में हत्यारे के प्रति बदला लेने का जो भाव बनता है उसके इस भाव को दूसरे जन्म में शमन करने को वैरायतनार्थ[5] कहते हैं। यदि क्षत्रिय वेद का विद्वान् पुरुष हो, सोमयाग में दीक्षित हो उसकी हत्या करने वाला अभिशस्त होता है।[6]

वैश्य-वध विषयक प्रायश्चित्त

यदि वैश्य का कोई वध करे तो अपना पाप दूर करने के लिए सौ गायों तथा एक साँड का दान करे।[7] यदि वैश्य सोम याग में दीक्षित हो, वेद का विद्वान् हो उसकी हत्या करने वाला अभिशस्त होता है।[8]

---

1 प्रथमं वर्ण परिहाप्य प्रथमं वर्ण हत्वा सङ्ग्रामं गत्वाऽवतिष्ठित तत्रैनं हन्युः। आ0ध0सू01.9.25.12

2 लक्ष्यं वास्याज्जन्ये शस्त्रभृताम्। गौ0 ध0 सू0 3.4.3.

3 अग्नौ सक्तिर्ब्रह्मध्नस्त्रिरवच्छातस्य।। गौ0 ध0 सू0 3.4.2

4 क्षत्रियं हत्वा गवां सहस्रं वैरायतनार्थं दद्यात्। आ0 ध0 सू0 1.9.24.1, 4, आ0 श्रौ0 सू0 9.1.4, तै0 सं0 2.2.2, गौ0 ध0 सू0 3.4.14

5 आ0 ध0 सू0 1.9.24.1 पर हरदत्त की व्याख्या

6 आ0 ध0 सू0 1.9.24.6

7 शतं वैश्ये, ऋषभश्चाधिकः सर्वत्र प्रायश्चित्तार्थः आ0 ध0 सू0 1.9.24.2, 4, गौ0 ध0 सू0 3.4.15

8 आ0 ध0 सू0 1.9.24.6

शूद्र-वध विषयक प्रायश्चित्त

यदि शूद्र का वध हो जाये तो दस गायों तथा एक साँड का दान प्रायश्चित्त निमित्त करें।[1]

स्त्री-वध विषयक प्रायश्चित्त

न केवल ये प्रायश्चित्त पुरुषों के वध पर ही करें यदि इन वर्णों की स्त्रियों का वध हो जाए तो भी ऐसा ही प्रायश्चित्त करें।[2] इन सभी निमित्तों में गायों के दान कर लेने पर साँड का दान मनु ने भी कहा है।[3]

जिन पुरुषों की हत्या करने पर हत्या करने वाला अभिशस्त हो जाता है उनके सम्बन्ध में आपस्तम्ब ने कहा है कि उन पापी व्यक्तियों के शरीर का एक अङ्ग काटने पर यदि उनके प्राण संकटापन्न नहीं होते तो शूद्र के वध तुल्य प्रायश्चित्त होता है।[4]

मनु[5] का कथन हैं कि ब्रह्म हत्यारे को किसी प्रकार का प्रायश्चित्त नहीं उसे मृत्यु दण्ड मिलना चाहिए : अर्थात् पाप मुक्ति के लिए कठिन से कठिन दण्ड भोगे।

प्रायश्चित्तों के विषय में विद्वानों धर्मसूत्रकारों व स्मृतिकारों के भिन्न–भिन्न मत व विधान हैं जिन्हें अपनाकर पापी पाप से मुक्त हो जाता है।

पशु-पक्षी-वध विषयक प्रायश्चित्त

पशु–पक्षी–वध विषयक प्रायश्चित्त भी आपस्तम्ब धर्मसूत्रकार की दृष्टि से ओझल नहीं हुआ है। धर्मसूत्रकार ने इन सभी के वध करने पर प्रायश्चित्त करने का उल्लेख किया है।[6]

---

1 दशशूद्रे. आ0 ध0 सू0 1.9.24.3,4, गौ0 ध0 सू0 3.4.16

2 स्त्रीषु चैतेषामेव। आ0 ध0 सू0 1.9.24.5, गौ0 ध0 सू0 3.4.17

3 ऋषभश्चाऽत्राधिकः सर्वत्र प्रायश्चित्तार्थः, आ0 ध0 सू0 1.9.24.4, मनु स्मृ0 11/127–130

4 येष्वाभिशस्त्यं तेषामेकाङ्ग छित्वा अपाणिहिंसायाम्, आ0 ध0 सू0 3.9.26.6

5 मनु स्मृ0 11/72–82

6 धेन्वनडुहोश्चाऽकारणात्। आ0 ध0 सू0 1.9.26.1

बिना कारण के दूध देने वाली गौ या बैल की हत्या करने पर शूद्र की हत्या के लिए जो प्रायश्चित्त कहा गया है वही प्रायश्चित्त विधेय है। गौतमधर्मसूत्रकार ने गौ हत्या करने पर वैश्य वध तुल्य प्रायश्चित बतलाया है।[1] गौ हत्या करने वाला एक मास तक पञ्चगव्य पीता हुआ संयमपूर्वक जप–तप करे, रात्रि शयन गौशाला में करे, दिन में गौओं की रक्षा करे, उनके पीछे–पीछे चले कृच्छ्र और अति कृच्छ्र व्रत करे, तीन दिन–रात उपवास करे, दस गौओं और बैलों का दान करे।[2]

आपस्तम्बधर्मसूत्र में उल्लेख है कि यदि कोई कौआ, गिरगिट, मोर, चक्रवाक, हंस, भास नामक पक्षी, मेंढक, नेवला, डेरिका (गन्धमूषिका) अथवा कुत्ते की हत्या करता है तो उसे अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए वही उपाय करना चाहिए जो कि शूद्र की हत्या करने पर किया जाता है।[3] गौतमधर्मसूत्रकार ने कहा है उपर्युक्त का वध करने पर वैश्य वध के समान प्रायश्चित्त होता है।[4]

छोटे प्राणियों का जिनमें अस्थियाँ न हो इन का भार चाहे बैल के भार के बराबर क्यों न हो, वध करने पर शूद्र वध के बराबर आपस्तम्बधर्मसूत्रकार ने प्रायश्चित्त कहा है।[5] किन्तु गौतमधर्मसूत्र में विधान है कि बिना अस्थि वाले एक हज़ार जीवों का वध करने पर वैश्य–वध के समान प्रायश्चित्त करना चाहिए।[6] बैल के भार के बराबर भार वाले बिना अस्थि के जीव की हत्या के प्रायश्चित्त के विषय में गौतमधर्मसूत्रकार का मन्तव्य है कि

---

1 गां च वैश्यवत्, गौ0 ध0 सू0 3.14.18

2 पञ्चगव्यंपिबेद्गोघ्नोमासमासीत् संयमः गोष्ठे शयोऽनुगामी गो प्रदानेनशुध्यति।। कृच्छ्र–चैवतिकृच्छ्र– इत्यादि याज्ञ0 स्मृ0 प्रा0 प्र0 63–64, पृ0 246

3 वायसप्रचलाकबर्हिणचक्रवाक हंस भास मण्डूक नकुलडेरिका खहिंसायां शूद्रवत्प्रायश्चित्तम्। आ0 ध0 सू0 1.9.25.14

4 मण्डूक नकुल काक बिम्ब दहरमूषकश्वहिंसासु च। गौ0 ध0 सू0 3.4.19

5 धुर्यवाहप्रवृत्तो चेतरेषां प्राणिनाम्। आ0 ध0 सू0 1.9.26.2

6 अस्थन्वतां सहस्रं हत्वा। गौ0 ध0 सू0 3.4.20

इसमें वैश्य वध के तुल्य ही प्रायश्चित्त करना चाहिए।[1]

याज्ञवल्क्य स्मृतिकार ने कहा है कि छोटे हड्डी वाले एक हज़ार जीव या बिना हड्डी के एक गाड़ी भर जीव की हिंसा करने का प्रायश्चित्त शूद्र की हत्या तुल्य है। मेंढक और किसी पक्षी की हत्या पर तीन दिन–रात केवल दूध पान करें, बिला व गोह के लिए भी यही प्रायश्चित्त करे।[2]

चौर कर्म विषयक प्रायश्चित्त

चौर कर्म करने के फलस्वरूप जो पातक लगता है उसकी निवृत्ति के लिए भी प्रायश्चित्त का विधान धर्मसूत्रकार ने किया है।

जिस किसी भी अवस्था में चाहे आपत्ति हो अथवा सामान्य अवस्था हो – ऐसी स्थिति में जो व्यक्ति दूसरे की सम्पत्ति को प्राप्त करने का लालच करता है उसे स्तेन अर्थात् चौर कर्म कहते हैं। ऐसा कौत्स और हारीत तथा काण्व और पुष्करसादी का मत है।[3] परन्तु वार्ष्यायणि दूसरे की कुछ वस्तुओं को ग्रहण करने में अपवाद भी बतलाते हैं।[4]

कोश के भीतर पकने वाले बीज (कोशी धान्य, मुदग्, माष, चणक आदि) तथा गाय बैल को खिलाने वाला घास इनके खिलाने वाले व्यकि को, उक्त वस्तुओं के स्वामी को निषेध नहीं करना चाहिए। इनका अल्प मात्रा में ग्रहण किये जाने पर दोष नहीं है किन्तु अधिक मात्रा में ग्रहण करने पर दोष होता है।[5]

आपस्तम्बधर्मसूत्रकार[6] ने हारीत को उद्घृत करते हुए कहा है कि, "हारीत के

---

1 अनस्थिमतामनडुद्भारे च। गौ0 ध0 सू0 3.4.21

2 अस्थिमतांसहस्रंतु तथानस्थिमतामनः।
मार्जार गोधा नकुल मण्डूकांश्चपतत्रिणः। याज्ञ0 स्मृ0 प्रा0 प्र0 श्लोक 3/68, पृ0 247

3 यथा कथा च पर परिग्रहमभिमन्यते स्तेनोह भवतीति कौत्सहरीतौ तथा काण्वपुष्करसादी।
आ0 ध0 सू0 1.10.28.1

4 सत्यपवादाः परपरिग्रहेष्विति वार्ष्यायणिः। आ0 ध0 सू0। 1.10.28.2

5शम्योषा युग्यघासो न स्वामिनः प्रतिषेधयन्ति अतिव्यवहारो व्यृद्धो भवति।आ0ध0सू0 1.10.28,3,4

6 सर्वत्राऽऽनुमिति हहारीतः। आ0 ध0 सू0 1.10.28.5

मतानुसार सभी वस्तुओं को ग्रहण करने से पूर्व स्वामी की अनुमति ले लेनी चाहिए। अनुमति न लेने पर चोरी का दोष लगता है।

जो व्यक्ति ईंधन, जल, मूल,, फूल, फल, गन्ध, शाक आदि बिना यह जाने हुए कि यह किसी दूसरे के हैं मनमाने ढ़ंग से ले जाता है तो राजपुरुषों को चाहिए कि उसे वाणी से डांटकर रोक दें।[1] जो व्यक्ति जानबूझ कर ग्रहण करता है उसके वस्त्र उतार कर अपहरण कर लेना चाहिए।[2]

चौरकर्म विषयक प्रायश्चित्त के सम्बन्ध में आपस्तम्बधर्मसूत्र[3] में कहा गया है कि चोर अपने बालों को बिखेरे हुए तथा कन्धे पर मूसल रखकर राजा के पास जाकर अपने चौरकर्म के विषय में कहे। राजा उस मूसल से चोर के ऊपर प्रहार करे, यदि उस प्रहार से उस का वध हो जाए तो उसे चोरी के पाप से मुक्ति मिल जाती है। यदि राजा उसे क्षमा कर दे तो उसका पाप क्षमा करने वाले राजा को ही लग जाता है।[4] अथवा वह चोर अपना पाप निवारण करने के लिए स्वयं को अग्नि में झोंक दे।[5] चोरी करने वाला या सुरापान तथा गुरुपत्नीगामी प्रत्येक चौथे दिन भोजन के समय थोड़ा भोजन करे, तीन सवनों के समय स्नान करे, दिन खड़े–खड़े, रात्रि बैठे–बैठे बितावे, यह कर्म तीन वर्ष तक करे तभी

---

1 परपरिग्रहमविद्वानाददान ए धोदके मूले पुष्पे फले गन्धे ग्रासे शाक इति वाचा बाध्यः।। आ0 ध0 सू0 2.11.28.11

2 विदुषो वाससः परिमोषणम्। आ0 ध0 सू0 2.11.28.12

3 स्तेनप्रकीर्णकेशोऽसे मुसलमाधाय राजानं गत्वा कर्माऽऽचक्षीत। तेनैनं हन्याद्वधे मोक्षः।। आ0 ध0 सू0 1.9.25.4

4 (क) अनुज्ञातेऽनुज्ञातारमेनः स्पृशति। आ0 ध0 सू0 1.9.25.5

(ख) ब्राह्मणस्वर्ण हारी तु राज्ञे मुसलमर्पयेत् स्वकर्मख्यापयंस्तेन हतो मुक्तोऽपिवाशुचिः।।

या0 स्मृ0 3/57

5 अग्निं वा प्रविशेत्, आ0 ध0 सू0 1.9.25.6

उसका पाप दूर हो सकता है।[1] अथवा कठोर तप का बार–बार आचरण करे[2] या भोजन में प्रतिदिन ह्रास करता हुआ अपना जीवन समाप्त कर दे।[3] अथवा एक वर्ष तक कृच्छ्र व्रत करे।[4]

गुरुपत्नी-गमन प्रायश्चित्त

आपस्तम्बधर्मसूत्र में प्रथम प्रश्न के नवम पटल पर पच्चीसवीं काण्डिका में यह कहा गया है कि गुरु की पत्नी से मैथुन करने वाला महापातकी होता है। इस तरह का महापातक करने वाले व्यक्ति के अण्डकोष सहित जननेन्द्रिय को काट देना चाहिए तथा पापी के हाथ में देना चाहिए। वह पापी उसे हाथ में लेकर दक्षिण दिशा में बिना रुके चलता रहे और तब तक चलता जाए जब तक गिरकर मृत्यु को प्राप्त न हो जाय।[5] महर्षि याज्ञवल्क्य ने भी गुरुपत्नीगमन के सम्बन्ध में इसी प्रायश्चित्त का विधान बतलाया है।

अथवा उपर्युक्त पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए उसे लोहे या ताँम्बे की लाल जलती हुई स्त्री प्रतीमा का आलिङ्गन करवाकर जीवन को समाप्त करवाना चाहिए।[6]

---

1 स्तेयं कृत्वा सुरां पीत्वा गुरुदारं च गत्वा ब्रह्महत्यामकृत्वा चतुर्थकालामितभोजिनः स्युरपोऽभ्यवेयुः सवानानुकल्पम्।। आ0 ध0 सू0 1.9.25.11

2 तीक्ष्णं वा तप आयच्छेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.25.7

3 भक्तापचयेन वाऽऽत्मानं समाप्नुयात्। आ0 ध0 सू0 1.9.25.8

4 कृच्छ्रसंवत्सरं वा चरेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.25.9

5 (क) गुरुतल्पगामी सवृषणं शिश्नं परिवास्याऽञ्जलावा धाय दक्षिणां दिशमनावृत्तिं व्रजेत्। आ0 ध0 सू0 1.9.25.1

(ख) तप्तेऽयः शयने .... नैर्ऋत्यां चोत्सृजेन्तनुम्। याज्ञ0 स्मृ0 3/259

6 (अ) ज्वलिता वा सूर्मिं परिष्वज्य समाप्नुयात्।। आ0 ध0 सू0 1.9.25.2

(आ) तप्ते लोह शयने गुरुतल्पगः शयीतः। गौ0 ध0 सू0 3.5.8

(इ) सूर्मीं वाश्लिष्येज्ज्वलन्तीम्। गौ0 ध0 सू0 3.5.9

(ई) लिङ्ग वा सवृषणमुत्कृत्याञ्जलावाधाय दक्षिणाप्रतीचीं व्रजेदजिह्ममाशरीरनिपातात्। गौ0 ध0 सू0 3.5.10

(उ) गुरुतल्पगस्तप्ते लोहशयने शयीत।। बौ0 ध0 सू0 2.1.1.12

माता, मौसी, सास, मामी, बुआ, तायी–चाची, शिष्य की पत्नी, बहन, उसकी सहेली, शरण में आयी सगोत्री, वधू, पुत्री, गुरुपत्नी आदि के विषय में मैथुन करने पर उसको प्रायश्चित्त करने के लिए उस पापी के गुप्ताङ्ग को काटने का विधान मिलाता है।[1]

गुरुप्त्नीगमन करने वाले के विषय में अन्य प्रायश्चित्त भी इसी धर्मसूत्र में कहे गये हैं। पापी अपने दुष्कर्म का प्रायश्चित्त करने के लिए खोखली लोहे की बनी मूर्ति जिस में भीतर प्रवेश कर सके उस में प्रवेश कर के दोनों ओर अग्नि को जला कर अपने को जला कर समाप्त कर ले।[2] किन्तु इसी प्रायश्चित्त का विरोध हारीत[3] ने किया है, उनके मत को उद्घृत करते हुए धर्मसूत्र में कहा है कि जो किसी का या अपना जीवन समाप्त कर लेता है वह अभिशस्त होता है।[4] ऐसे गुरुतल्पगामी को अधर्म से प्राप्त हुई सुख की वस्तुओं का त्याग करना चाहिए। नाभि से घुटनों तक वस्त्र धारण करके प्रतिदिन तीन सवनों तक स्नान करके दूध, मसाला, नमक से वर्जित अन्न का भोजन करते हुए बारह वर्ष तक घर में प्रवेश नहीं करना चाहिए।[5] इस विधि का अन्तिम श्वास तक आचरण

(ऊ) सूर्मिं ज्वलन्तीं वा श्लिष्येत्। बौ0 ध0 सू0 2.1.1.13

(ए) लिङ्ग वा सवृषणं परिवास्यसाञ्चलावाधाय दक्षिणा प्रतीच्योर्दिशीरन्तरेण गच्छेदानिपतनात्। बौ0 ध0 सू0 2.1.1.14

1 माता मातृष्वसा श्वश्रुर्मातुलानी पितृष्वसा। पितृव्यपत्नी शिष्यस्त्री . . . गुरुतल्पग उच्यते दण्डो विधीयते। आ. ध0 सू0 1.9.26.1, हरदत्त की व्याख्या में नारद को उद्घृत् करते हुए, पृ0 186

2 गुरुतल्पगामी तु सुषिरां सूर्मिं प्रविश्योभयत आदीप्याऽभिदहेदात्मानम्। आ0 ध0 सू0 1.10.28.15

3 मिथ्यैतदिति हारीतः। आ0 ध0 सू0 1.10.28.16

4 यो ह्यात्मानं परं वाऽभिमन्यतेऽभिशस्त एव स भवति। आ0 ध0 सू0 1.10.28.17

5 अधर्माहृतान् भोगाननुज्ञाय न वयं चाऽधर्मश्चेत्यभिव्याहृत्याऽध्यो नाभ्यु परिजान्वाच्छाद्य त्रिषवणमुदकम् उपस्पृशन्नक्षीराक्षारलवणंभुञ्जानो द्वादशशवर्षाणि नाऽगारं प्रविशेत्। आ0 ध0 सू0 1.10.28.11

करना चाहिए। उसे किए गए पाप की शुद्धि इस जीवन में प्राप्त नहीं होती है। अपितु मृत्यु के बाद उसका पाप दूर हो जाता है।[1]

अपतनीय प्रायश्चित्त

जिन पाप कर्मों के करने से पतन नहीं होता उन्हें अपतनीय कहा जाता है। डॉ0 महामहोपाध्याय पी0 वी0 काणे के अनुसार "वे पाप जिन से जाति च्युतता नहीं होती किन्तु अशुचिता होती हैं उन्हें अपतनीय पाप कहा गया है।"[2]

गुरुपत्नियों के अतिरिक्त अन्य विवाहिता स्त्रियों से किया गया मैथुनकर्म कुछ विद्वानों के मत से पतन का कारण नहीं होता है।[3]

शूद्रों के साथ आर्य नारी द्वारा यौन सम्बन्ध करना, जिनके माँस का भक्षण नहीं करना चाहिए, अर्थात् निषिद्ध (कुत्ते, मनुष्य, गाँव में मुर्गे, ग्राम के सूअर, शव–भक्षी पशु–पक्षियों का) माँस भक्षण अशुचिकर कहा है।[4] मनुष्य के मल–मूत्र का भक्षण, शूद्र का उच्छिष्ट खाना आर्यों का अपपात्र स्त्रियों से यौन सम्बन्ध अशुचिकर कहा है।[5] इसके अतिरिक्त कुछ दूसरे भी अपतनीय कर्म हैं जैसे, जिस व्यक्ति पर किसी भी प्रकार का आक्रोश नहीं करना चाहिए, यदि ऐसे पूज्य व्यक्ति पर आक्रोश करने वाला, छोटी बात पर झूठ बोलने की भी परवाह न करने वाला, तीन दिन तक दूध, मसाले एवं नमक का सेवन न करें तो उसके पाप का प्रायश्चित्त सम्भव है।[6]

---

1 एतेनैव विधिनो त्तमादुच्छ्वासाच्चरेन्नाऽस्यास्मिल्लोके प्रत्यापत्तिर्विद्यते कल्पषं तु निर्हण्यते।।
आ0 ध0 सू0 1.10.28.18

2 ध0 शा0 का इति0, भाग– 3, पृ0 1020

3 नाऽगुरुतल्पे पततीत्येके। आ0 ध0 सू0 1.7.21.10

4 आ0 ध0 सू0 1.7.21.12–18, पृ0 156–157

5 आ0 ध0 सू0 1.7.21.16, 17

6 आ0 ध0 सू0 1.9.26.3

यदि शूद्र वर्ण के व्यक्ति से यही अपराध हो जाये तो सात दिन तक उपवास करने से पाप का प्रायश्चित्त होता है।[1] स्त्रियों के भी ऐसा अपराध करने पर उपर्युक्त प्रायश्चित्त कर पाप से मुक्त हो जाती हैं।[2]

नियम का भङ्ग करने वाले ब्राह्मचारी को एक वर्ष तक चुपचाप गुरु की सेवा करनी चाहिए। प्रतिदिन के स्वाध्याय के समय आचार्य, आचार्य–पत्नी से किसी आवश्यक कार्य के समय और भिक्षाचरण के समय ही बातचीत करने का विधान किया गया है।[3]

काम और मन्यु के लिए 'कामोऽकार्षीत्', 'मन्युरकार्षीत्' अर्थात् ऐसा काम और मन्यु ने कहा है प्रायश्चित्त के लिए हवन करना चाहिए, इसमें काम और मन्यु के मन्त्र जपने का नियम बताया गया है।[4]

पर्वों (पौर्णमासी तथा अमावस्या) पर तिलों का भक्षण कर उपवास करना चाहिए तथा दूसरे दिन स्नान करने के बाद प्राणायाम करके एक हज़ार गायत्री मन्त्र का जप करने का विधान है। यह जप बिना प्राणायाम के भी हो सकता है।[5] श्रावण महीने की पौर्णमासी को तिल का भक्षण करने का विधान है या उपवास करके किसी बड़ी नदी में स्नान कर और एक हज़ार याज्ञिक वृक्ष की समिधाएं गायत्री मन्त्र का जप करते हुए अग्नि पर रखे या एक हज़ार बार गायत्री जप करे ऐसा उल्लेख धर्मसूत्रकार ने किया है।[6]

---

1 आ० ध० सू० 1.9.26.4

2 आ० ध० सू० 1.9.26.5

3 आ० ध० सू० 1.9.26.11

4 आ० ध० सू० 1.9.26.12–14

5 आ० ध० सू० 1.9.26.15

6 आ० ध० सू० 1.9.27.1

निषिद्ध भोजन का भक्षण करने पर तब तक उपवास करना चाहिए जब तक उदर मल–रहित न हो जाए।[1] यह पेट का मल लगभग सात रात्रियों तक साफ हाता है। अथवा हेमन्त और शिशिर ऋतुओं में प्रातः सायं ठण्डे जल से स्नान करना चाहिए।[2]

अपनी शुद्धि के लिए (मृगरादि) इष्टियाँ, सोमयाग, अग्निष्टोम आदि यज्ञ भी कर सकता है।[3]

अनार्य आचरण करने वाला, दूसरों पर दोष लगाने वाला, निषिद्ध आचार का अनुसरण करने वाला, वर्जित वस्तु का भक्षण व सेवन करने वाला, शूद्रा स्त्री से मैथुन आदि या एतत् सम्बन्धी दुष्कर्म करने वाला, प्रायश्चित्त करने के लिए "आपोहिष्ठा मयोभुव" आदि तीन मन्त्रों से तथा "हिरण्यवर्णाश्शुचयः पावकाः" आदि इन चार मन्त्रों से स्नान जल से अभिषेक करे। अथवा वरुण के मन्त्रों 'इमं मे वरुण', 'तत्त्वा यामि', 'त्वन्नो अग्ने' आदि मन्त्रों या 'पवमानस्सुवर्जन' आदि मन्त्रों द्वारा अपराध की मात्रा के अनुसार प्रायश्चित्त निमित्त स्नान करना चाहिए। इस प्रकार का उल्लेख आपस्तम्ब-धर्मसूत्र में उपलब्ध है।[4]

ब्रह्मचर्य को भंग करने वाला अवकीर्णी ब्रह्मचारी निर्ऋति के लिए पाक यज्ञ की विधि से गदर्भ की बलि प्रदान करके और अविशिष्ट माँस का शूद्र को भक्षण करवाएं ऐसा विधान बतलाया गया है।[5]

कृच्छ्र व्रत का विधान

यह व्रत प्रायश्चित्त के लिए किया जाता है। कृच्छ्र व्रत करने वाला व्यक्ति तीन दिनों तक सन्ध्या को भोजन न करे फिर अगले तीनों तक दिन में भोजन न करे।

---

1 आ० ध० सू० 1.9.27.9

2 आ० ध० सू० 1.9.27.3–6

3 आ० ध० सू० 1.9.27.2, गौ० ध० सू० 3.4.26

4 आ० ध० सू० 1.9.26.7

5 आ० ध० सू० 1.9.26.8,9 आ० गृ० सू० 7.15, मनु स्मृ० 11/118

तत्पश्चात् पुनः तीन दिन बिना माँगे प्राप्त अन्न ही खा कर रहे और उसके बाद तीन दिन तक कुछ न खाए। इस प्रकार इस व्रत के बारह दिन तक करने का विधान किया गया है। यदि इस व्रत की आवृत्ति वर्ष पर्यन्त करता रहे तो यह एक वर्ष का कृच्छ्र व्रत अर्थात् 'कृच्छ्रसंवत्सर' हो जाएगा।[1] इससे पाप का शमन होता है। प्रायश्चित्त हेतु इस व्रत का विधान है। गौतमधर्मसूत्रकार ने भी इसके करने की लगभग यही विधि बतलाई है तथा बौधायनधर्मसूत्रकार भी बारह दिन तक इस व्रत को करने का विधान करते हैं किन्तु आहार विषय में उनके मत में भिन्नता है।

गौतम के अनुसार प्रथम, द्वितीय की अपेक्षा तृतीय कृच्छ्र व्रत करने वाला सभी पापों से मुक्त हो कर देवों में प्रख्यात हो जाता है।

---

1 (क) त्र्यहमनक्ताश्यदिवाशी ततस्त्र्यहम्, त्र्यहमयाचित्तव्रतस्त्र्यहं नाश्नाति किञ्चनेति कृच्छ्रद्वादशरात्रस्य विधिः। आ0 ध0 सू0 1.9.27.7, मनु0 स्मृ0 11/211

(ख) गौ0 ध0 सू0 3.8.2, 3, तीसरे प्रश्न का पूर्ण अष्टम अध्याय

(ग) बौ0 ध0 सू0 4.5.5.6, 8–29